अबू सलाम @थियान पुत्र श्री थियान मोहम्मद, बंदी सं-962, सामान्य कारागार,

त्रिवेंद्रम

बनाम

भारत संघ और अन्य

अप्रैल 17,1990

[एस रथिनावेल पांडियन, न्यायाधीश और के. जयचंद्र रेड्डी, न्यायाधीश]

विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी गतिविधियों की रोकथाम अधिनियम-धारा 3 (1)-निरोध आदेश-हिरासत में लिए गए व्यक्ति को गिरफ्तार करने में केवल देरी-क्या यह निरोध प्राधिकारी की व्यक्तिनिष्ठ संतुष्टि पर संदेह पैदा करता है। -निरोध आदेश देने में देरी और केंद्र सरकार के प्रतिनिधित्व का निपटान- क्या घातक है।

अपीलार्थी अपनी हज यात्रा के बाद जेद्दा गया था और जेद्दा से वह 15.9.1987 को बॉम्बे पहुँचा था। इसके बाद वह केरल में अपने पैतृक स्थान जाने के लिए बस में सवार हुए। 17.9.1987 को, सीमा शुल्क अधिकारियों ने उस बस को रोक दिया जिसमें याचिकाकर्ता यात्रा कर रहा था और पंच गवाहों की उपस्थिति में, उनकी और उनके द्वारा पहनी गई चप्पलों की तलाशी ली। चप्पल खोलते ही विदेशी निशान वाली लगभग 13 सोने की सिल्लियां मिलीं और उन्हें विधिवत बरामद कर लिया गया। अपीलार्थी ने स्वीकार किया कि उसे एक ऐसे व्यक्ति से मिलवाया गया था जिसने उसे

भारत में सोना ले जाने के लिए पारिश्रमिक देने का वादा किया था और इस तरह वह उन सोने के बिस्कुटों को लाया था। निरोध प्राधिकारी ने 21.9.1988 को अपीलार्थी के खिलाफ निरोध आदेश पारित किया, और समय के भीतर उसे निरोध के आधार बता दिए गए और उसे सूचित किया गया कि यदि वह चाहे तो तो वह सलाहकार बोर्ड को अभ्यावेदन दे सकता है, और यह भी कि वह निरोध प्राधिकारी या केंद्र सरकार को अभ्यावेदन दे सकता है। अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका के माध्यम से अपनी नजरबंदी को चुनौती दी और उस के खारिज होने पर, उसने विशेष अनुमति प्राप्त करने के बाद यह अपील दायर की है। अपीलार्थी ने आग्रह कियाः (i) निरोध आदेश देने में देरी और केंद्र सरकार द्वारा उसके अभ्यावेदन का निपटान घातक है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 22 (5) का उल्लंघन करते है; और (ii) निरोध आदेश के अनुसार उसे गिरफ्तार करने में देरी निरोध प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर संदेह पैदा होता है।

अपील को खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने कहा: घटना के बाद हिरासत का आदेश पारित करने में विलंब यथातथ्यतः किसी व्यक्ति को हिरासत में लेने के लिए घातक नहीं है। इस मामले में विलंब स्वयं निरोध को अमान्य नहीं करता है लेकिन अन्यथा भी इसे उचित रूप से समझाया गया है। [524 जी]

व्याख्या से यह देखा जा सकता है कि अभ्यावेदन पर बहुत तेजी से विचार किया गया और कोई लापरवाही या कठोर निष्क्रियता या टालने योग्य लाल-फीताशाही नहीं हुई।"[523 सी]

इसलिए यह देखा जा सकता है कि निरोध के आदेश की पालना में केवल गिरफ्तारी में देरी पर निरोध प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि को गैर वास्तविक नहीं माना जा सकता। प्रत्येक मामला अपने तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। अदालत को देखना होगा क्या देरी को उचित रूप से समझाया गया है। इस मामले में, यह अदालत बंदी की गिरफ्तारी में देरी के स्पष्टीकरण से संतुष्ट है। [525 जी-एच]

खुदीराम दास बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य, [1975] 2 एस. सी. सी. 81; तारा चंद बनाम राजस्थान राज्य, [1980] 2 एस. सी. सी. 321; श्याम अंबालाल सिरोया बनाम भारत संघ और अन्य, [1980] 2 एस. सी. आर. 1078; साबिर अहमद बनाम भारत संघ और अन्य, [1980] 3 एससीआर 738; राम धोंडू बोराडे बनाम वी. के. सराफ, पुलिस आयुक्त और अन्य, [1989] 3 एस. सी. सी. 173; टी. ए. अब्दुल रहमान बनाम केरल राज्य और अन्य, [1989] 4 एस. सी. सी. 741; लक्ष्मण खटिक बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1974] 4 एस. सी. सी 1; राजेंद्रकुमार नटवरलाल शाह बनाम गुजरात राज्य और अन्य, [1988] 3 एस. सी.सी 153; योगेंद्र मुरारी बनाम यू.पी. राज्य, [1988] 4 एससीसी 558; हेमलता कांतिलाल शाह बनाम महाराष्ट्र राज्य, [1981] 4 एस. सी. सी. 647 और एस. के. सेराजुल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1975] 2 एस. सी. सी. 78, संदर्भित किया गया।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील सं. 271/1990.

आपराधिक रिट सं. 34/1989 में दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांकित 16.1.1989 से।

अपीलार्थी की ओर से के. वी. विश्वनाथन और एस. आर. सेतिया।

प्रतिवादी की ओर से टी. टी. कुन्हीकन्ना, उदय ललित और पी. परमेश्वरन।

न्यायालय का निर्णय के. जयचंद्र रेड्डी, न्यायाधीश द्वारा दिया गया था।

अनुमति दी गई।

यह अपील बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट की मांग करती है। अपीलार्थी जिन्हें कोफेपोसा अधिनियम, 1974 की धारा 3 (1) (i) और 3 (1) (iii) के तहत हिरासत में लिया गया है, उन्होंने निरोध आदेश को चुनौती दी है। अपीलार्थी केरल के मलपुरम जिले के पनाक्कड़ का मूल निवासी है और अपनी हज यात्रा के बाद जेद्दा गया था और जेद्दा से वह 15.9.87 को बॉम्बे पहुँचा था। फिर वह अपने पैतृक स्थान जाने के लिए बस से रवाना हुआ। 17.9.87 को सीमा शुल्क अधिकारियों ने तिरुवन्नूर के पास बस को रोक लिया और पंच गवाहों की उपस्थिति में अपीलार्थी की तलाशी ली गई और उसके द्वारा पहनी गई चप्पलों का निरीक्षण किया गया और उन्हें खोले जाने पर विदेशी निशान वाली लगभग 13 सोने की सिल्लियां मिलीं और उन्हें विधिवत बरामद कर लिया गया। इसके अलावा कुछ आपत्तिजनक दस्तावेज भी बरामद किए गए। सोने की कीमत रुपये. 4,64,951 लगाई गई और यह तस्करी का सोना पाया गया। अपीलार्थी से सीमा शुल्क अधीक्षक ने पूछताछ की और अपीलार्थी का बयान दर्ज किया गया। उसने

स्वीकार किया कि उसे एक ऐसे व्यक्ति से मिलवाया गया था जिसने उसे पारिश्रमिक देने का वादा किया था अगर वह यह सोना भारत ले जाता है और अपीलार्थी सहमत हो गया और इन सोने के बिस्कुटों को ले गया। आपराधिक कार्यवाही शुरू की गई। हालाँकि, निरोध प्राधिकारी, केरल सरकार के गृह सचिव ने संतुष्ट होकर अपीलार्थी को तस्करी गतिविधियों से रोकने के उद्देश्य से उसके खिलाफ दिनांक 21.9.88 को निरोध आदेश पारित किया। आदेश के आधारों को भी समय के भीतर प्रदान किया गया था और आधारों में उपरोक्त सभी विवरणों का उल्लेख किया गया है। इन आधारों में अपीलार्थी को यह भी सूचित किया गया कि यदि वह सलाहकार बोर्ड को अभ्यावेदन देना चाहता है, तो वह इसे अध्यक्ष, सलाहकार बोर्ड को संबोधित कर सकता है और वह निरोध प्राधिकारी या केंद्रीय सरकार को भी अभ्यावेदन दे सकता है। उसी पर सवाल उठाते हुए वर्तमान अपील दायर की गई है।

यह निवेदन किया जाता है कि अभ्यावेदन 27.9.88 को केंद्र सरकार किया गया था और इसे 2.11.88 को निपटाया गया था। इसलिए केंद्र सरकार द्वारा अभ्यावेदन को अस्वीकार करने में काफी देरी हुई और यह देरी भारत के संविधान के अनुच्छेद 22 (5) का उल्लंघन है। अगला निवेदन यह है कि हालांकि सोने की कथित तस्करी 17.9.87 को हुई थी, लेकिन निरोध आदेश 21.5.88 को पारित किया गया था, यानी आठ महीने के अंतराल के बाद और वह भी एक अकेला उदाहरण था और देरी के कारण, वह पुराना हो गया है और तस्करी की कथित तारीख और हिरासत की तारीख के बीच कोई संबंध स्थापित करने के लिए कोई अन्य तत्व नहीं है। अगला निवेदन यह

है कि निरोध आदेश के निष्पादन में देरी हुई थी जिसे केवल 6.8.88 को निष्पादित किया गया था, हालांकि 21.5.88 को पारित किया गया था और यह कि कोई आरोप नहीं है कि अपीलार्थी फरार था। यह भी निवेदन किया जाता है कि अपीलार्थी को सलाहकार मंडल के समक्ष अपने मामले का प्रतिनिधित्व करने का प्रभावी अवसर नहीं दिया गया था क्योंकि अपीलार्थी को किसी अधिवक्ता या उसके दूसरे मित्र द्वारा प्रतिनिधित्व करने की अनुमति नहीं थी।

जवाबी-हलफनामे में यह कहा गया है कि सीमा शुल्क कलेक्टर ने 24.3.1988 को अपीलार्थी को निरुद्ध करने के लिए प्रस्ताव प्रस्तुत किए, और निरोध आदेश 21.5. 1988 को पारित किया गया था और अपीलार्थी को 6.8.1988 को निरुद्ध किया गया गया था। अपीलार्थी ने 27.9.1988 को एक अभ्यावेदन निरोध प्राधिकारी को दिया, और 1.10.1988 को यह राज्य सरकार द्वारा पर खारिज कर दिया गया और केंद्र सरकार ने 2.11.1988 को इसे खारिज कर दिया। इसलिए जवाबी हलफनामे में यह स्वीकार किया गया है कि केंद्र सरकार द्वारा अभ्यावेदन पर विचार करने और अस्वीकार करने में एक महीने और पांच दिनों की देरी हुई है।

यह देखा जा सकता है कि जहां तक राज्य सरकार अर्थात् निरोध प्राधिकारी का संबंध है, इसमें कोई देरी नहीं है, लेकिन निवेदन यह है कि केंद्र सरकार द्वारा अभ्यावेदन के निपटारे में देरी भी घातक है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 22 (5) में कहा गया है कि जब किसी व्यक्ति को निवारक निरोध का प्रावधान करने वाले किसी कानून के तहत बनाए गए आदेश के अनुसरण में निरुद्ध किया जाता है, तो आदेश देने

वाला प्राधिकारी, जितनी जल्दी हो सके, ऐसे व्यक्ति को उन आधारों से अवगत कराएगा जिनके आधार पर आदेश दिया गया है और उसे आदेश के खिलाफ अभ्यावेदन करने का जल्द से जल्द अवसर प्रदान करेगा।

यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि यह खंड बंदी को अभ्यावेदन करने का एक मूल्यवान अधिकार प्रदान करता है और यह भी अनिवार्य करता है कि निरोध अधिकारी को बिना किसी देरी के इसका निपटान करना चाहिए। इसलिए यह इस खंड के तहत अधिकार दोहरा है, अर्थात् आदेश देने वाले प्राधिकारी को आदेश दिए जाने के तुरंत बाद हिरासत में लिए गए व्यक्ति को उन आधारों के बारे में सूचित करना चाहिए जिन पर आदेश दिया गया है और दूसरा यह कि निरुद्ध किए गए व्यक्ति को आदेश के खिलाफ अभ्यावेदन करने का जल्द से जल्द अवसर भी दिया जाना चाहिए।

अनुच्छेद 22 (5) स्वयं यह नहीं कहता है कि अभ्यावेदन किसे किया जाता है या अभ्यावेदन पर कौन विचार करेगा। जिस कानून के तहत उन्हें हिरासत में लिया गया है उसके प्रावधानों के अनुसरण में उपयुक्त सरकार कानूनी रूप से इन आवश्यकताओं का पालन करने के लिए बाध्य है। उपयुक्त सरकार के लिए यह अनिवार्य है कि वह निरुद्ध किए गए व्यक्ति के अभ्यावेदन पर सलाहकार बोर्ड द्वारा निरुद्ध किए गए व्यक्ति के मामले पर विचार करने से अलग विचार करे। लेकिन विद्वान वकील जो निवेदन करता है वह यह है कि केंद्र सरकार जिसके पास राज्य प्राधिकरण द्वारा पारित निरोध आदेश को रद्द करने की शक्ति है उसका यह कानूनी दायित्व है कि वह बिना देरी किए

अभ्यावेदन का निपटान करें। विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के कुछ निर्णयों पर भरोसा किया।

खुदीराम दास बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य, [1975] 2 एस. सी. सी. 81 में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 22 के खंड (5) की मूल अपेक्षाओं में से एक यह है कि आदेश देने वाले प्राधिकारी को बंदी को आदेश के खिलाफ अभ्यावेदन करने का जल्द से जल्द अवसर देना चाहिए और यह आवश्यकता तब तक अप्रभावी होगी जब तक कि बंदी के प्रतिनिधित्व पर जल्द से जल्द विचार करने का कोई संबंधित दायित्व न हो। हमारे लिए उन सभी निर्णयों को संदर्भित करने की आवश्यकता नहीं है जो अभ्यावेदन पर विचार करने में उपयुक्त सरकार द्वारा की गई देरी से संबंधित हैं क्योंकि इस मामले में राज्य सरकार जो निरोध प्राधिकारी है द्वारा अभ्यावेदन पर विचार करने में कोई देरी नहीं हुई है।

कोफेपोसा अधिनियम, 1974 की धारा 11 निरोध आदेश रद्द करने से संबंधित है और धारा 11 (बी) के तहत केंद्रीय सरकार किसी भी समय राज्य सरकार द्वारा दिए गए आदेश को रद्द या संशोधित कर सकती है। यद्यपि स्पष्ट रूप से कहें तो केंद्र सरकार अनुच्छेद 22 (5) के अर्थ के भीतर निरोध करने वाली प्राधिकारी नहीं है, फिर भी वे निरोध आदेश का जल्द से जल्द निपटान करने के लिए कानूनी दायित्व के तहत हैं, लेकिन सवाल यह है कि क्या केंद्रीय सरकार द्वारा इस तरह की देरी की भी ऐसी कठोर जांच की जानी चाहिए जो उपयुक्त सरकार अर्थात् निरोध प्राधिकरण द्वारा की गई देरी के मामले में की जाती है।

तारा चंद बनाम राजस्थान राज्य, [1980] 2 एस. सी. सी. 321 में इस अदालत ने कहाः

> "एक बार केंद्रीय सरकार को अभ्यावेदन दिया जाने के बाद, वह अपने विवेक का प्रयोग करके उसे स्वीकार या अस्वीकार करने में उस पर विचार करने को कर्तव्यबद्ध है। अगर अभ्यावेदन पर विचार करने में अत्यधिक देरी होती है तो यह स्पष्ट रूप से अनुच्छेद 22 (5) का उल्लंघन होगा जिससे निरोध असंवैधानिक और अमान्य हो जाएगा।"

श्याम अंबालाल सिरोया बनाम भारत संघ और अन्य, [1980] 2 एस. सी. आर. 1078 में कहा गया है किः

> "केंद्र सरकार द्वारा निरोध को रद्द करने की शक्ति से तात्पर्य है कि निरुद्ध व्यक्ति उस शक्ति के प्रयोग के लिए एक अभ्यावेदन दे सकता है। निरोध के आदेश को निरस्त करने के लिए किसी भी याचिका का निपटान तेजी से करना चाहिए। निरस्तीकरण याचिका के निपटान के लिए केंद्र सरकार को उचित समय मिलना चाहिए। लेकिन यह उसके लिए न्यायोचित नहीं होगा कि वह निरोध को रद्द करने के लिए अभ्यावेदन की अनदेखी करे क्योंकि यह केंद्र सरकार का कानूनी दायित्व है। यह आवश्यक है कि सरकार को

अपना दिमाग लगाना चाहिए और या तो निरोध के आदेश को रद्द करना चाहिए या रद्द करने के आदेश को अस्वीकार करते हुए याचिका को खारिज करना चाहिए।"

साबिर अहमद बनाम भारत संघ और अन्य, [1980] 3 एस. सी. आर. 738 केंद्र सरकार की निरस्त करने की शक्ति पर विचार करते हुए यह देखा गया है कि ऐसी शक्ति का उद्देश्य निरोध प्राधिकारी या राज्य सरकार द्वारा निरोध की अपनी शक्ति के अनुचित प्रयोग के खिलाफ एक अतिरिक्त जांच या सुरक्षा प्रदान करना है और केंद्र सरकार को उचित तत्परता के साथ इस पर विचार करना चाहिए और उचित तत्परता क्या हो, वह विशेष मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। तर्कसंगत समयसीमा के बारे में कोई निश्चित नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता है। यह भी माना जाता है कि इसमें निश्चित रूप से लापरवाही, कठोर निष्क्रियता, टालने योग्य लाल फीताशाही और अनावश्यक रूप से लंबे समय तक विलंब शामिल नहीं है।।

साबिर अहमद के मामले के साथ-साथ श्याम अंबालाल सिरोया के मामले में बंदी द्वारा केंद्र सरकार को दिए गए अभ्यावेदन की अनदेखी की गई और लगभग चार महीने की अवधि के लिए बिना संभाले छोड़ दिया गया और उन परिस्थितियों में यह माना गया कि अनुच्छेद 22 (5) का उल्लंघन हुआ है।

राम धोंडू बोराडे बनाम वी. के. सराफ, पुलिस आयुक्त और अन्य, [1989] 3 एस. सी. सी. 173 में बंदी ने 26.9.1988 केंद्र सरकार को एक अभ्यावेदन दिया और केंद्र

सरकार द्वारा अभ्यावेदन को अस्वीकार करने के निर्णय को 31.10.1988 को अपीलार्थी को सूचित किया गया था। केंद्र सरकार द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण को इस आधार पर स्वीकार नहीं किया गया कि यह संतोषजनक नहीं है। टी. ए. अब्दुल रहमान बनाम केरल राज्य और अन्य, [1989] 4 एस. सी. सी. 741 में 72 दिनों की देरी हुई थी और यह देखा गया था कि निरुद्ध किया गए व्यक्ति के अभ्यावेदन पर तत्परता और शीघ्रता से विचार नहीं किया गया और उस पर बिना ध्यान दिये उसे ऐसे ही रहने दिया गया।

इन सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए हम जांच करेंगे कि क्या केंद्र सरकार ने अभ्यावेदन पर तत्परता से विचार किया है या नहीं। हम पहले ही देख चुके हैं कि अभ्यावेदन 27.9.88 को किया गया था और केंद्र सरकार द्वारा 2.11.88 को, यानी एक महीने और पांच दिनों के भीतर निपटाया गया था। केंद्र सरकार की ओर से दायर जवाबी-हलफनामे में कहा गया है कि अभ्यावेदन दिनांकित 27.9.88 वित्त मंत्रालय के कोफेपोसा अनुभाग में 10.10.88 को प्राप्त किया गया था और अभ्यावेदन मलयालम में था। यह भी कहा गया कि कुछ दस्तावेजों को न रखने और उन्हें कुछ दस्तावेजों की आपूर्ति न करने के संबंध में कुछ आरोप थे। इसलिए अभ्यावेदन की एक प्रति उसी दिन प्रायोजक प्राधिकरण यानी सीमा शुल्क कलेक्टर, कोच्चि को भेजी गई थी और सीमा शुल्क कलेक्टर, कोच्चि से टिप्पणियां दिनांकित 25.10.88 कोफेपोसा अनुभाग में 27.10.88 को प्राप्त हुईं और अतिरिक्त सचिव ने उनकी जांच की और अपनी टिप्पणियों के साथ उन्हें 31.10.88 को राजस्व राज्य मंत्री को भेज दिया गया, क्योंकि 29 और 30

अक्टूबर, 1988 की छुट्टियां थीं। राजस्व राज्य मंत्री ने इस टिप्पणी के साथ उसी दिन यानि 31.10.88 को वित्त मंत्री को अभ्यावेदन भेजा। वित्त मंत्री ने 1.11.88 पर अभ्यावेदन पर विचार किया और अस्वीकार कर दिया और पत्रावली 2.11.88 को कार्यालय में प्राप्त हुई और उसी दिन, अभ्यावेदन को अस्वीकार करने वाला एक ज्ञापन बंदी को भेजा गया। स्पष्टीकरण से यह देखा जा सकता है कि अभ्यावेदन पर बहुत तेजी से विचार किया गया था और इसमें कोई "लापरवाही या कठोर निष्क्रियता या टालने योग्य लाल फीताशाही" नहीं थी।

इन कारणों से हम विद्वान वकील के इस तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हैं।

विद्वान वकील का अगला निवेदन यह है कि तारीख की तलाशी की तारीख 17.9.87 थी और लंबे समय के बाद 21.5.88 को निरोध आदेश पारित किया गया था और इसलिए कथित घटना और निरोध आदेश के बीच कोई सांठगांठ नहीं है और इसलिए निरोध प्राधिकारी की तरफ से कोई वास्तविक संतुष्टि नहीं है। विद्वान वकील ने निवेदन किया कि घटना और निरोध के बीच कोई सक्रिय मौजूदा संबंध नहीं था। लक्ष्मण खटिक बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1974] 4 एस. सी. सी.1 में यह देखा गया कि केवल निरोध आदेश पारित करने में हुआ विलंब निर्णायक नहीं है लेकिन दिए गए आधारों के प्रकार को देखना होगा और फिर विचार करना होगा कि इतनी देरी के बाद निष्कर्ष पर पहुंचने में कि बंदी को हिरासत में लेने की आवश्यकता थी, क्या इस तरह के आधार वास्तव में एक अधिकारी के लिए महत्वपूर्ण थे। राजेन्द्र कुमार नटवरलाल शाह बनाम गुजरात राज्य और अन्य, [1988] 3 एस. सी. सी. 153 में . यह माना गया

है कि केवल देरी से निरोध आदेश पारित करना तब तक घातक नहीं है जब तक कि अदालत यह न पाए कि आधार पुराने या भ्रामक हैं या आधार और निरोध के बीच कोई वास्तविक संबंध नहीं है। अब्दुल रहमान के मामले में सोने के बिस्कुट की जब्ती 30.11.86 को हुई थी और उसके 11 महीने बाद निरोध आदेश पारित किया गया था। इस आधार पर कि इस अनुचित, अविवेकी और अस्पष्टीकृत देरी के लिए कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण नहीं था, यह माना गया कि देरी निरोधक प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि की वास्तविकता पर काफी संदेह पैदा करती है।

इस मामले में, जवाबी-हलफनामे में, जो निरोध प्राधिकारी की ओर से दायर किया गया है, में कहा गया है कि याचिकाकर्ता से जुड़े मामले के अभिलेख प्रायोजक प्राधिकरण के कार्यालय में 1.2.88 को प्राप्त किए गए थे, और उन्हें कार्यालय में संसाधित किया गया था और सीमा शुल्क अधिनियम के तहत कारण बताएँ नोटिस 9.2.88 को जारी किया गया था और प्रस्तावों को 24.3.88 को कोफिपोसा कार्रवाई के लिए भेजा गया था और उन्हें राज्य सरकार द्वारा 2.4.88 पर प्राप्त किया गया था। इस मामले पर जाँच समिति द्वारा विचार किया गया था जिसकी बैठक 28.4.88 को हुई और उसके बाद निरोध प्राधिकरण को प्रस्ताव प्रस्तुत किए गए। 2.5.88 को निरोध प्राधिकरण ने मामले को प्रायोजित करने में देरी के कारणों का पता लगाने का आदेश दिया और तदनुसार कोच्चि में प्रायोजक प्राधिकरण को 2.5.88 को निवेदन किया गया। उन्हें 7.5.88 और 12.5.88 को पुनः स्मरण कराया गया था। उनका जवाब 16.5.88 पर प्राप्त हुआ और उसके बाद 21.5.88 को आदेश पारित किया गया। हमारे विचार में, देरी

को उचित रूप से समझाया गया है। अदालतों ने यह निर्धारित नहीं किया है कि केवल इस तरह की देरी पर हिरासत को रद्द किया जाना चाहिए। योगेंद्र मुरारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1988] 4 एस. सी. सी. 558, में यह माना गया है किः

> "यह मान लेना सही नहीं है कि यदि निरोध के आदेश को कुछ देरी के बाद पारित किया जाता है तो उसे यांत्रिक रूप से रद्द कर दिया जाना चाहिए.....प्रत्येक व्यक्तिगत मामले में परिस्थितियों पर विचार करना आवश्यक है ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या देरी को संतोषजनक ढंग से समझाया गया या नहीं।"

इसके अलावा, हम विद्वान वकील से सहमत होने में असमर्थ हैं कि इस देरी के कारण आवश्यक संबंध टूट गया है और आधार पुराने और भ्रामक हो गए हैं। इस तरह के तर्क पर विचार करते हुए, न्यायालय को निरुद्ध किए गए व्यक्ति द्वारा की गई प्रतिकूल गतिविधियों की प्रकृति और उसे दोहराने की प्रवृत्ति को भी ध्यान में रखना होगा। उसकी इस संभाव्यता को ध्यान में रखा जाना चाहिए और यदि निरोध प्राधिकारी उपलब्ध तत्वों पर संतुष्ट है तो केवल देरी के आधार पर जब तक कि यह अत्यधिक अविवेकी और अनुचित नहीं है, अदालत को निरोध को रद्द नहीं करना चाहिए।

हेमलता कांतिलाल शाह बनाम महाराष्ट्र राज्य, [1981] 4 एस. सी. सी. 647 में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी घटना के बाद निरोध का आदेश पारित करने में विलंब अपने आप से किसी व्यक्ति के निरोध के लिए घातक नहीं है। इन

कारणों से हमारा विचार है कि इस मामले में देरी अपने आप में हिरासत को अमान्य नहीं करती है, लेकिन अन्यथा भी इसे उचित रूप से समझाया गया है।

फिर भी विद्वान वकील द्वारा आग्रह किया गया एक और आधार यह है कि निरोध आदेश पारित होने के बाद हिरासत में लिए गए व्यक्ति को गिरफ्तार करने में देरी हुई थी और इसलिए निरोध आदेश में कोई वास्तविकता नहीं है। जवाबी-हलफनामे में कहा गया है कि निरोध आदेश पारित होने के बाद, इसे 23.5.88 को तत्काल निष्पादन के लिए मलप्पुरम के पुलिस अधीक्षक को भेजा गया था, और उनको मलप्पुरम के वृत निरीक्षक को भेजा गया। 29.6.88 को यह बताया गया कि वृत निरीक्षक ने उचित पूछताछ की थी लेकिन निरुद्ध किए गए व्यक्ति को पकड़ा नहीं जा सका। उसके बाद पुलिस अधीक्षक के निर्देशों के अनुसार एक विशेष दस्ते को प्रतिनियुक्त किया गया था, जिसके बाद उसे 6.8.88 को हिरासत में लिया गया। जवाबी-हलफनामे में आगे यह निवेदन किया गया है कि आदेश के निष्पादन में देरी निरुद्ध किए गए व्यक्ति द्वारा जानबूझकर स्वयं को छिपाने के प्रयास के कारण हुई है।

इसके अलावा ऐसा कोई निर्णय नहीं है जिसमें अदालत ने इस हद तक जाकर माना हो कि आरोपी को गिरफ्तार करने में केवल देरी करने से हिरासत अमान्य हो जाती है। इस मामले में, देरी, यदि हुई भी है, तो केवल ढाई महीने की है और देरी के लिए दिया गया स्पष्टीकरण उचित है। हालाँकि, विद्वान वकील ने अब्दुल रहमान के मामले पर भरोसा किया। उस मामले में निरोध का आदेश 7.10.87 को पारित किया गया था और बंदी को 18.1.88 को गिरफ्तार किया गया था। अदालत ने पाया कि

जवाबी हलफनामे में देरी के लिए कोई उचित स्पष्टीकरण नहीं था। नजरबंदी को रद्द करने में अन्य महत्वपूर्ण आधारों के साथ इस आधार को भी ध्यान में रखा गया था। एस. के. सेराजुल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1975] 2 एस. सी. सी. 78 में यह देखा गया है किः

> "देरी हुई, आदेश पारित करने और उसे गिरफ्तार करने के दोनों चरणों में, और यह देरी, जब तक कि संतोषजनक रूप से नहीं समझाई गई हो, व्यक्तिपरक संतुष्टि की वास्तविकता पर काफी संदेह पैदा करेगी। लेकिन इसका यह गलत मतलब नहीं निकाला जाना चाहिए कि जब भी निरोध का आदेश देने में या निरोध के आदेश के अनुसरण में बंदी को गिरफ्तार करने में देरी होती है, तो निरोध अधिकारी की व्यक्तिपर्क संतुष्टि सही नहीं थी या जाली थी। प्रत्येक मामले को अपने विशिष्ट तथ्य और परिस्थितियों पर निर्भर होना चाहिए। निरोध अधिकारी के पास देरी के लिए एक उचित स्पष्टीकरण हो सकता है और यह इस निष्कर्ष को दूर करने के लिए पर्याप्त है कि संतुष्टि वास्तविक नहीं थी।"

इसलिए यह देखा जा सकता है कि हिरासत के आदेश के अनुसरण में व्यक्ति को गिरफ्तार करने में केवल देरी होने पर, निरोध प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि को गैर-वास्तविक नहीं माना जा सकता है। प्रत्येक मामला अपने विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर होता है। न्यायालय को यह देखना होगा कि क्या देरी को

उचित रूप से समझाया गया है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, इस मामले में, हम बंदी को गिरफ्तार करने में देरी के स्पष्टीकरण से संतुष्ट हैं। इसलिए इस तर्क को भी खारिज किया जाता है। उपरोक्त सभी कारणों से, अपील खारिज कर दी जाती है।

वाई.लाल

याचिका खारिज कर दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक अशोक कुमार मीना द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।